शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2013

इतिहास का पुनराख्यान: कितने पाकिस्तान

डा.पुष्पेंद्र दुबे
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
महाराजा रणजीतसिंह कालेज आफ प्रोफेशनल साइंसेस
खण्डवा रोड इन्दौर

शोध संक्षेप

इतिहास के सामने यह प्रश्न सदैव से उपस्थित रहा है कि इतिहास की घटनाओं का अर्थ कैसे लगाया जाए। इसका उत्तर बुद्धि पर निर्भर है। घटनाएं वे ही होती हैं, पर उनके अर्थ तरह-तरह से लगाये जाते हैं और विभिन्न मत बना करते हैं। देश, काल, परिस्थिति के प्रभाव में इतिहास पर अनेक प्रकार के आक्षेप लगते रहे हैं। इसीमें से यह बात निकलकर सामने आती है कि, "इतिहास समाज का सच्चा चित्र प्रस्तुत नहीं करता है। ऐसी बात नहीं है कि उसमें इसकी क्षमता नहीं है। क्षमता है, पर कतिपय राजनीतिक दांव-पेंच के कारण इतिहास रंगीन बन जाता है। सच्ची बात को छिपा लेता है। पर ऐसी बात सच्चे साहित्य में नहीं मिलती। सच्चा साहित्यकार न तो राज्याश्रित होता है, न धर्माश्रित। वह समाज का सच्चा प्रतिनिधि होता है। समाज का सजग प्रहरी होता है। तुलसीदास धर्माश्रय की ओट में साहित्य रचना कर रहे थे। उन्होंने समाज का चित्रांकन किया है।

प्रस्तावना

साहित्यकार कमलेश्वर के उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' की ये पंक्तियां ध्यान देने योग्य हैं कि, "इतिहास में ऐसे दौर बहुत आते हैं, जब उस दौर के लोगों के सिर गायब हो जाते हैं......सोचना-समझना और सच की तहकीकात का सिलसिला खत्म हो जाता है....अदीबे आलिया! हम उसी दौर से गुजर रहे हैं।" तात्पर्य यह है कि अभिव्यक्ति पर पाबंदियां हरेक युग में लगती रही हैं। राज्यसत्ता को बेजुबानों से विशेष प्रेम होता है।

उपन्यास के फ्लैप पर अपने मंतव्य के स्पष्ट करते हुए कमलेश्वर स्वयं लिखते हैं, "यह उनके मन के भीतर लगातार चलने वाली एक जिरह का नतीजा है जो अभी भी जारी है और जिसके तहत आदमी और उसके जात, कबीले, राष्ट्र सभ्यता, धर्म आदि विविध समूहों के आपसी जानलेवा संघर्ष की इस समस्या से सदैव जूझते रहे हैं।" इस उपन्यास में उन्होंने 'अदीब' को कचहरी में बैठाकर दुनियाभर की सभी सभ्यताओं में चलने वाले संघर्ष की समस्याओं को उठाया है जो साहित्य के इतिहास में अपनी तरह का पहला और ज्यादा सार्थक प्रयोग है।

साहित्य और इतिहास के आपसी संबंध को समझने के लिए हमें अरस्तू के इस कथन को भी ध्यान में रखना चाहिए जिसमें वे कहते हैं, "कवि का यह कर्तव्य नहीं है कि वह घटित घटना की आवृत्ति करे, बल्कि क्या घट सकता है इसका संकेत दे। इतिहास तथ्य पर निर्भर करता है। कविता तथ्य को सत्य में परिवर्तित करती

है। काव्य का सत्य यथार्थता की नकल नहीं होता। अपितु वह उच्चतर यथार्थ ही होता है, जिसमें क्या हो सकता है का स्वरूप रहता है न कि क्या है ?''

साहित्यकार कभी सत्य का तिरस्कार नहीं कर पाता। वह अपनी क्रांतदृष्टि से उस सत्य का साक्षात्कार कर ही लेता है, जो छिपा हुआ रहता है। साहित्यकार ऐतिहासिक तथ्यों को कल्पना के सुंदर समन्वय से मामूली से घटनाक्रम को भी अप्रतिम बना देता है। ''ऐतिहासिक उपन्यासों में दो बातें विशेष ध्यान देने की होती हैं, ''एक तो अभिप्रेत काल के जीवन यथार्थ से घनिष्ठ रूप से परिचित होना, दूसरे इतिहास के तथ्यों के साथ कल्पना का सुंदर समन्वय कर साहित्यिक कृति का निर्माण करना।''2

कितने पाकिस्तान और इतिहास

'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में कमलेश्वर की अनकही बेचैनी को आज पूरी दुनिया में शिद्दत से महसूस किया जा रहा है। हमारे सामने वही प्रश्न बार-बार उपस्थित होते हैं, जिनके उत्तर सदियों से ढूंढे जा रहे हैं। उपन्यास में उठायी गयी समस्याएं किसी एक देश की सीमा तक बंधी हुई नहीं हैं, बल्कि इसका विस्तार दिग-दिगंत तक है। इतिहास के सूक्ष्म सूत्रों के सिरे को पकड़कर कमलेश्वर ने जिस वातावरण की सृष्टि की है और अपने प्रमाण पुष्ट तर्कों को जिस भाषा में प्रस्तुत किया है, वह अद्भुत है। 'उपन्यास की समकालीनता' पुस्तक में ज्योतिष जोशी लिखते हैं, ''कितने पाकिस्तान' (2000) कमलेश्वर का लिखा वह मर्मस्पर्षी उपन्यास है जिसमें पाकिस्तान दरअसल एक रूपक है, उस बर्बर मानसिकता का रूपक जो मनुष्यता, सांस्कृतिकता और सहिष्णु समाज व्यवस्था के बदले हिंसा, विभाजन और मतांधता चाहती है। इस मायने में यह उपन्यास अपने विन्यास में एक संस्कृति-कथा है जिसमें लड़ती-कटती मनुष्यता का भावांकन तो है ही, उन शक्तियों को बेपर्द करने का साहस भी है जो दुनिया को शांति और चैन से नहीं रहन देना चाहतीं। अपनी व्यापकता और विराट् दृष्टि के कारण यह उपन्यास विश्व फलक की कृति बन सका है जिसमें उठाये गये प्रश्न केवल एक देश की सीमा तक सीमित नहीं है, वरन् उनका एक वैश्विक धरातल बनता है और उपन्यास धर्मों, सांस्कृतिक कट्टरताओं और रंगभेदी फिरकापरसतों के खिलाफ एक मुहिम में बदल जाता है।''3

इस तथ्य की पुष्टि इस मंतव्य से होती है कि, '' अब्बाजान कहते हैं - ''इस्लाम की नजर से पाकिस्तान बनना ही गुनाह है....क्योंकि इस्लाम नफरत नहीं सिखाता, पर पाकिस्तान की बुनियाद नफरत पर ही रखी गयी है....इस्लाम जैसा मजहब किसी मुल्क की सरहदों में कैसे कैद किया जा सकता है! कोई मजहब कैद नहीं किया जा सकता....इस्लाम तो खासतौर से नहीं।''

अपने असाधारण इतिहास बोध के सहारे कमलेश्वर ने भारत की पांच हजार साल लंबी परंपरा में इतिहास के तमाम घटनाक्रमों पर लेखनी चलाई है, जिन्होंने दुनिया के इतिहास को बदल कर रख दिया। कमलेश्वर की इतिहास दृष्टि भौगोलिक सीमाओं को लांघ कर भारत में आर्यों के आगमन के प्रश्न तक चली जाती है। भारत में आर्यों के आगमन को लेकर अनेक तथ्य चलन में हैं। लेकिन कमलेश्वर ने अपने ही ढंग

से इस प्रश्न पर विचार किया है। वे लिखते हैं कि आर्य आदिम कृषि से परिचित खानाबदोश कबीले थे, जो सहनशील प्रकृति और सृजनगर्भा धरती की तलाश में निकले थे। सिंधु घाटी में सहनशीला प्रकृति तो थी ही, सृजनगर्भा धरती की भी कमी नहीं थी। इसलिए आक्रमण या युद्ध की जरूरत नहीं थी। आर्य आए और इधर-उधर बस गए होंगे। वे लिखते हैं, "आर्यों के वे कबीले जो सहस्रों-सदियों पहले क्रोषिया के बिंदिजा इलाके से चले थे, उनमें से कुछ थककर रूस के दक्षिणवर्ती घास के मैदानों में रुक गये थे। जिन कबीलों का साथ कुदरत ने नहीं दिया, वे मिस्र की तरफ निकल गए, लेकिन आर्यों के बड़े-बड़े कबीलों को पूरब का सूरज ज्यादा आकर्षित कर रहा था। उन्होंने प्रकाश की दिशा पूरब की ओर बढ़ना ही पसंद किया। अंधकार के बाद उदित होकर पूरब का सूरज उन्हें पुकारता था....इसलिए वे आर्य कबीले उफरातु और तिग्रा नदियों से होते हुए, उस पार जाकर तबरेज और तेहरान के रास्ते से सिंधु घाटी की ओर बढ़ गए।" आर्य कबीलों का दूसरा कारवां मशद के इलाके को छोड़ता हुआ हेरात और ब्लख के रास्ते बोलन दर्रे से सिंधु प्रदेश में दाखिल हुआ था। आर्यों का तीसरा कारवां जो खैबर के दर्रे को पार करके सिंधु घाटी में दाखिल हुआ, वह मोहन-जोदड़ों और हड़प्पा के इलाके में बस गया...शायद इन्हीं आर्यों का राजा है इंद्र! वह भी सम्राट गिलगमेश की तरह महाविलासी है.....।"4

'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में अदीब की अदालत में एक-एक कर इतिहास रचने वाले सारे लोग उपस्थित होते हैं। लेखक अपने प्रश्नों के उत्तर उन्हीं से चाहता है, जो उस परिस्थिति के लिए जिम्मेदार हैं। कमलेश्वर इसके लिए इतिहास के उन पन्नों को भी उलटते चलते हैं, जो स्वार्थपूर्ति के लिए विशेष उद्देश्य से लिखे गए अथवा मिटाए गए। अदीब की अदालत में बाबर का कथन है, "मुझे सुल्तान इब्राहीम लोदी के चचा, पंजाब के सूबेदार दौलत खां और रणथंभोर के हिन्दू राजपूत राणा सांगा ने बुलाया था।"5

इस देश के सबसे ज्वलंत प्रश्न बाबरी मस्जिद के इतिहास पर तथ्यात्मक प्रकाश डाला गया है। बाबर कभी अयोध्या गया ही नहीं था। वह सरयू के किनारे से ही लौट आया था। ए.फ्यूहरर अदीब की अदालत में उपस्थित होकर बताता है, "हिजरी 930 यानी करीब 17 सितंबर सन् 1523 में इब्राहीम लोदी ने उस मस्जिद की नींव रखवाई थी, और जो 10 सितंबर 1524 में बनकर तैयार हुई, जिसे अब बाबरी मस्जिद कहा जाता है।" आगे फ्यूहरर बताता है, "हमारी पालिसीज बदलीं और तब यह तय किया गया कि हिन्दू और मुसलमान जो 1857 में एक हुए थे, इन्हें अलग-अलग रख जाए...नहीं तो अंग्रेजी हुकूमत चलने नहीं पाएगी। इसीलिए मैंने बाबरी मस्जिद पर लगा इब्राहीम लोदी का जो षिलालेख पढ़ा था, उसे जानबूझकर मिटाया गया....लेकिन मैंने उसका अनुवाद किया था, वह आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इंडिया की फाइलों में पड़ा रह गया।...इसीके साथ् बाबरनामा के वो पन्ने गायब किए गए जो इस बात का सबूत देते हैं कि यह बाबर अवध में गया तो जरूर, पर कभी अयोध्या नहीं गया, और उसके बाद हमारी अंग्रेज कौम ने और खास तौर से एच.आर.नेविल ने जो फैजाबाद गजेटियर तैयार किया, उसमें शैतानी से यह दर्ज किया कि

बाबर अयोध्या में एक हफ्ते ठहरा और इसी ने प्राचीन राम मंदिर को मिसमार किया!"6

ब्रिटिश हुकूमत ने अपनी साम्राज्यवादी नीति के अनुरूप हिन्दू-मुस्लिम के बीच धर्म के नाम पर किस प्रकार खाई पैदा की, इसके प्रमाण-स्वरूप लेखक ने दो घटनाओं को बहुत ही सही परिप्रेक्ष्य में पूरे ऐतिहासिक प्रमाणों के साथ प्रस्तुत किया है। एक तो 'बाबारनामा' के बीस पृष्ठों को गायब कराना और दूसरे अपने चहेते अफसरों, पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के कर्ता-धर्ता कनिंघम और फैजाबाद गजेटियर के लेखक अंग्रेज अफसर नेविल से किस प्रकार लखनउ और फैजाबाद के गजेटियरों में गलत प्रविष्टियां दर्ज कराई गईं। उपन्यासकार ने प्रमाणपुष्ट ढंग से स्थापित किया है कि 'बाबरनामा' के 3 अप्रैल 1528 से 17 सितंबर 1528 तक के साढ़े पांच महीनों के पन्ने इसलिए गायब कराए गए कि अयोध्या की बाबरी मस्जिद को बाबर निर्मित बताया जा सके और लखनउ और फैजाबाद के गजेटियरों में भी यही दर्ज कराया जा सके।"7 अंग्रेजों ने हिंदुस्तान के इतिहास के साथ जो खेल खेला, उसकी सजा वह आज तक भुगत रहा है। अंग्रेजों ने हमारे इतिहास में अनेक ऐसी बातें दर्ज कर दी हैं जो कहीं हुई ही नहीं। उन्हें पढ़-पढ़कर हम आज भी आपस में दुश्मनी पाले हुए हैं। गजेटियर कनिंघम ने अयोध्या में 1 लाख 74 हजार हिंदुओं के मारे जाने की बात लिखी। लेकिन उसी वक्त के अंग्रेज नेविल ने फैजाबाद गजेटियर में लिखा है कि, "सन् 1869 में फैजाबाद-अयोध्या की कुल आबादी 9949 थी और सन् 1881 में उसीकी आबादी 11643 थी, यानी 12 वर्षों में करब 2000 आबादी की बढ़त हुई थी....सन् 1528 में उस इलाके की आबादी क्या रही होगी ? तब 1 लाख 74 हजार हिंदू कैसे मारे जा सकते थे ? इसलिए यह बात सफ होनी चाहिए कि अंग्रेजों ने हमारे मुल्क के साथ क्या खेल खेला है।"8

ब्रिटिश शासकों ने अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए ऐतिहासिक तथ्यों को बदलकर रख दिया। 'कितने पाकिस्तान' इतिहास के इन्हीं अंधेरे पहलूओं पर नया प्रकाश डालता है। देश में जब-तब भारत को हिन्दू राष्ट्र घोषित करने की आवाजें उठती रहती हैं। इस आवाज ने बहुत बड़ी कीमत चुकाई है। इस पर तर्कपूर्ण दृष्टि से विचार करते हुए कमलेश्वर लिखते हैं, "हिंदुस्तान में हिंदू बहुसंख्या में थे, उनके राज्य भी थे लेकिन हिंदुस्तान कभी भी हिंदू राष्ट्र नहीं था! हिंदुस्तान का हिंदू धर्म राजसत्ता का प्रतीक नहीं था, इसीलिए यहां की सरजमीं पर कोई केंद्रीय धार्मिक सत्ता मौजूद नहीं थी और हिंदू अपने धर्म को मानते और स्वीकारते हुए भी धर्म की सत्ता से आजाद थे।" हिंदुस्तान का पौराणिक और जमीनी इतिहास गवाह है कि यहां हमेशा सत्य और सभ्यता के लिए धर्मयुद्ध लड़े गए लेकिन किसी धर्म विशेष की केंद्रीयता और वर्चस्व के लिए कोई महायुद्ध नहीं लड़ा गया। यह 'धर्म-युद्धों की धरती नहीं है....यहां तक कि राम-रावण का युद्ध भी धार्मिक वर्चस्वता और सत्ता का युद्ध नहीं था, वह अनाचार, अनैतिकता, अपसंस्कृति और अत्याचार के विरुद्ध लड़ा गया एक महान नैतिक युद्ध था।"9 कथा में उपस्थित सुभाष पंत, जोगिंदर पाल, वजीर आगा और कृष्णा तो इस विश्लेषण पर 'ब्रेवो!ब्रेवो - वाह-वाह कर उठते हैं।

ब्रिटिश शासकों ने हमारे इतिहास के साथ जो मनमानी की है, उसका गंभीर विश्लेषण इस

उपन्यास में पूरे प्रमाणों के साथ पहली बार हुआ है। "प्रत्येक युग का साहित्य अपने अतीत से जीवन-रस पाता है। जिस तरह एक पुष्ट वृक्ष की जड़ें धरती के अंतस्तल से जीवन-रस का शोषण कर वृक्ष की शाखाओं और पत्तों को सरस तथा प्राणवान बनाती हैं उसी प्रकार प्रत्येक स्थायी साहित्य के उपकरणों का चयन अतीत के गर्भ से होता है।"10

भूतकालीन अनुभवों से कुछ सीखने के लिए इतिहास का अध्ययन करना होता है। 'कितने पाकिस्तान' में कथा कहना उपन्यासकार का उद्देश्य नहीं है, बल्कि इसमें इतिहास का रचनात्मक इस्तेमाल हुआ है। दुनिया का कोई धर्म मनुष्यता का विरोधी नहीं हो सकता। वह तो समन्वय के सूत्र की भूमिका में होता है। समाज को विभाजित करने वाली ताकतों का वह सदैव विरोध करता रहता है। इस परिप्रेक्ष्य में 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास मानववादी विमर्श बन गया है। इसके चरित्रों के भीतर गहरी पीड़ा है।

"कमलेश्वर का उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' इतिहास और संस्कृति की इसी गहरी जरूरी समझ का विराट फलक बनकर आया है। मनुष्य के वर्तमान की चिंताओं को पूरे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करता यह उपन्यास न केवल राष्ट्रीय संदर्भों तक ही अपने को सीमित रखता है अपितु पूरे जहान की राजनीतिक, समाजार्थिक ज्वलंत समस्याओं का जूझता सही अर्थों में पाठक को एक ग्लोबल गांव-समाज का सदस्य बना देता है। यदि पूरे हिन्दी उपन्यास की कथा-यात्रा पर दृष्टिपात करें, तो कहा जा सकता है कि इतने विराट फलक का उपन्यास हिन्दी में दूसरा नहीं है। जिसमें राष्ट्रीय-अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं की ऐसी गंभीर पड़ताल और इतना गहन-गंभीर बौद्धिक विमर्श हुआ हो। अपने इस रूप में 'कितने पाकिस्तान' हिन्दी उपन्यास की विषयगत और कलागत रूढ़ियों को तोड़ता हुआ अपना एक नया मानक और माडल प्रस्तुत करता है।"11

आधुनिकबोध वाला साहित्यकार इतिहास की सामग्रियों को नये संदर्भों में स्वीकार करता है। कथावस्तु कितनी ही पुरानी हो, वह उसे नवीन तरीके से प्रस्तुत करता है। 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में न तो अपने देश के इतिहास की कोई महत्वपूर्ण घटना छूट पाती है और न विश्व के किसी भी देश, छोर या अंचल की कोई महत्वपूर्ण घटना या समस्या छूट पाती है। "ऐतिहासिक उपन्यास हो या इतिहास की सामग्रियों पर आधारित कोई साहित्यिक विधा, सभी को सत्य पाना ही होता है कि इतिहास वर्तमान के लिए ही है। साहित्यकार सर्जक है, जीवन का सर्जन करना ही उसका लक्ष्य होता है। वह इतिहासकार की भांति तमाम बीती बातों को उनकी अनेक स्थूल रंग-रेखाओं को पुनः प्रस्तुत नहीं करता। वह सर्जक के गहन दायित्व को समझकर उन्हें एक गहरे मानवीय सत्य से जोड़ता है। अतः जो लोग कहते हैं कि ऐतिहासिक उपन्यासों का आदर्श स्वरूप इतिहास को उसकी सही सच्चाइयों के साथ प्रस्तुत करने में है, वे लोग सत्य को ऐतिहासिक घटनाओं, पात्रों तथा अन्याय स्थूल आंकड़ों से ही जोड़ते हैं। उपन्यासकार चाहे इतिहास की बहुत-सी घटनाओं और पात्रों को ले या कुछ ही पात्रों या घटनाओं को या केवल वातावरण को, यदि वह कलाकार है तो वह इन सबका नियोजन इस ढंग से करेगा

शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2013

कि वर्तमान जीवन को प्रश्न और मानव-मूल्य मुखर हो जाएं।"12

निष्कर्ष

ऐतिहासिक उपन्यासों की सीमा काल विशेष में बद्ध होती है। ऐतिहासिक उपन्यासकार, इतिहासज्ञों, पुरातत्ववेत्ताओं आदि द्वारा संगृहीत नीरस तथ्यों को कल्पना द्वारा जीवित और संदुर बना देता है। वह इतिहास की कंकालवत नीरस अस्थियों पर कल्पना का रक्त मांस चढ़ाकर उन्हें मांसल और आकर्षक बनाता है। "साहित्य अतीत की प्रतिच्छाया और अनागत का प्रदीप होता है। इतिहास तथ्य सापेक्ष होता है। इतिहास दृष्टि तथ्य परक होती है, पर यदि इतिहासकार किसी धारणा विषेष के प्रति प्रतिबद्ध होकर इतिहास-लेखन करता है तो वह इतिहास के प्रति न्याय नहीं है। पीढियों के संस्कारों और विश्वासों को ढालने की ताकत इतिहास में ही होती है। किसी भी जाति के आत्मविश्वास और आत्मगौरव की चेतना जगाने वाला तत्व इतिहास है। इसलिए उसे मात्र तथ्यपरक ही रहने देना चाहिए। इतिहास की समकालीनता की गंथ महत्वपूर्ण होती है।"

सन्दर्भ

1 हिन्दी साहित्य: युग और धारा: पृष्ठ 17

2 हिन्दी उपन्यास: एक अंतर्यात्रा: रामदरष मिश्र: पृष्ठ 23

3 उपन्यास की समकालीनता: ज्योतिष जोषी: पृष्ठ 69

4 कितने पाकिस्तान: : पृष्ठ: 25

5 कितने पाकिस्तान: कमेलष्वर: पृष्ठ 68

6 कितने पाकिस्तान: कमलेष्वर: पृष्ठ 73

7 कितने पाकिस्तान: कमलेष्वर: पृष्ठ 71

8 कितने पाकिस्तान: कमलेष्वर: पृष्ठ 74

9 कितने पाकिस्तान: कमलेष्वर: पृष्ठ 228

10 आचार्य गणेषदत्त त्रिपाठी अभिनंदन ग्रंथ: साहित्य में अतीत और अनागत: पृष्ठ 109

11 हिन्दी गद्य इधर की उपलब्धियां: पुष्पपाल सिंह: पृष्ठ 13

12 हिन्दी उपन्यास: एक अंतर्यात्रा: रामदरष मिश्र: पृष्ठ 183-184

13 10 आचार्य गणेषदत्त त्रिपाठी अभिनंदन ग्रंथ: साहित्य में अतीत और अनागत: पृष्ठ 109